अभिषेक

(एकार्थ काव्य)

महोपाध्याय माणकचन्द रामपुरिया

कलासन प्रकाशन
कल्याणी भवन, बीकानेर (राज)

समर्पण -

11 3

शुभ अभिपेक समर्पित उर के-
खुलकर पुण्य-विवेक हुए हैं।
जीवन के इस पुष्प-प्रहर में-
हम-तुम दोनों एक हुए हैं।

माणकचन्द रामपुरिया

आत्मबोध

हाँ ये आत्मबोध ही हैं। इसकी संज्ञा तो भूमिका प्राक्कथन, निवेदन जैसे शब्दों से परे है। यह सही है कि प्रत्येक कार्य का कुछ-न-कुछ कारण होता ही है- और ये कारण ही प्राक्कथन क रूप में प्रयुक्त होते हैं ताकि कार्य के अनुमान्य कारणों का सत्याक्षरों में प्रतिबिम्बित किया जा सके। परिणामस्वरूप कार्यों को समझने की एक पुष्ट दृष्टि प्राप्त होती है।

अभिषेक - स्वत स्पष्ट है। इसके यथार्थ तक पहुँचने के लिए किसी प्राक्कथन की नहीं आत्मबोध की आवश्यकता है।

तो सच मानें यह आत्मबोध का ही परिणाम है कि आज आपके समक्ष अभिषेक प्रत्यक्ष हो सका है। सर्वज्ञात है कि अन्तर निधियों को आत्मनिष्ठ बनाये रखने में बड़ी ही तृप्ति मिलती है। किन्तु यह कवि की एक विकट परवशता है कि उसे अपनी व्यक्तिगत गोपनीयता के प्रत्यक्षीकरण में ही विशेष आनन्दानुभूति होती है। परम तृप्ति के इन अनुभूत क्षणों को अपने तक ही समाहित रखने में मेरी असमर्थता ही स्वत प्रकट है। तो आयें आप भी मेरे ऐकान्तिक क्षणों की तृप्ति के सहभागी बनें। ग्रन्थ आपके समक्ष है। इसके सम्बन्ध में मैं अपनी ओर से क्या निवेदन करूँ कुछ समझ नहीं पाता। ये अपने आप में एक प्रबन्ध भी है ओर गीतों के अजस्र स्फुलिंग भी।

जब मन के तिमिराच्छन्न अवशेष प्रकाशित हो उठते हैं- तो इस परिणति के समक्ष दो पक्ष सहज ही बिम्बित रहे हैं। अन्धकार के आवेष्टन जहाँ प्राणों में सूखे व्रण की तरह टीसते रहे हैं वहीं प्रकाश का उज्ज्वलाभास मन को आनन्दातिरेक प्रदान करता रहा है। यही कारण है कि पुस्तक में अपने जीवन की दोनों धाराओं का गुम्फन इसे प्रबन्ध की सार्थकता प्रदान कर सका है। स्रोत अपनी अजस्रता में गीतों का ही प्रवाहित रहा है किन्तु इनकी प्रत्येक तरंगों में प्रबन्ध का वह अन्तर्मुखी प्रवाह अवश्य रहा है- जो इसे जीवन की समग्रता की ओर उन्मुख करता है। इसी कारण प्रस्तुत पुस्तक में जहाँ कमनीय गीतात्मक भावों का अनुकम्पन है वहीं जीवन की यथार्थता का गुम्फन भी।

अन्त में एक बात और- सच पूछें तो ये निर्माल्य के कण ही हैं जो आप तक पहुँच गये हैं। जिनके निमित्त इन भावों का उद्रेक हुआ था उन्हें तो अवश्य ही तृप्ति मिली है- ऐसा विश्वास है।

मेरे सहृदय पाठकों को भी यदि इससे कुछ आनन्द मिल सका तो मैं अपने को धन्य समझूँगा। तथास्तु

माणकचन्द रामपुरिया

एक

हे नटनागर! नमन, तुम्हीं हो-
रास-रग की डोर मधुर,
प्रीत-गीत की धुन रहती है-
तेरे चारों ओर मधुर।

प्रेम-रंग में अँखियाँ पग कर-
तेरी धड़कन से लग-लग कर,
कर जाती है सारे तन को-
प्रतिपल भाव-विभोर मधुर।

रह-रह मादक स्वर जगता है-
अन्तर-तर में जग लगता है,
मैं ही क्या, अग-जग तक सबके-
तुम ही हो चित-चोर मधुर।

चाँद गगन में जब खिलता है-
प्राण-प्राण से जा मिलता है,
सकल सृष्टि के तुम बन जाते-
आकुल मुग्ध चकोर मधुर।

सागर की जितनी गहराई-
अम्बर की जितनी ऊँचाई
उससे कहीं अगम है तेरे-
भावुक मन के छोर मधुर।

✦ ✦ ✦

मेरा अन्तर-तर देखो।
मेरी कैसी है लाचारी-
सुख-दुख की है गठरी भारी
कैसे करते पल-छिन प्रतिपल-
आकर मेरे घर देखो।

एक दिवस था, मन जलता था-
मोह-भ्रमित भूतल छलता था,
जलकर राख हुआ है मेरा-
सपना सब सुन्दर देखो।

लेकिन ऐसे काम न होगा-
पलभर भी विश्राम न होगा,
लौ सी सदा सुलगती रहती-
प्रीति दृगों में भर देखो।

सच मानो, यह हृदय तुम्हारा-
गीत बनेगा चाँद-सितारा,
नेम-प्रेम कुछ नहीं टलेगा-
मुझको अपना कर देखो।

✦ ✦ ✦

प्राणों में थी घनी वेदना।
जिस पर तन-मन न्योछावर था-
दृग को जो बेहद सुन्दर था,
कितनी कसक उठी थी उस दिन-
सत्य स्वय जब स्वप्न बना।

उसे भूलना बड़ा कठिन है-
अन्तर इतना नहीं मलिन है,
लेकिन सिर पर गहन तिमिर का-
कब तक रहे वितान तना।

अभिषेक ।

मन-से तो कुछ करना होगा-
है मँझधार, उबरना होगा,
बहुत दिनों तक नहीं रहेगा-
सिर पर अविरल मेह-घना।

दीप जलाऊँगा मैं जगकर-
दृग की नूतन लौ से लगकर,
यही रहेगी प्रीति निरतर-
मेरी गति की सबल प्रेरणा।

✦ ✦ ✦

शब्द कहीं से आता है।
आँख अचानक भींग रही है-
मन में पावन धार बही है,
लगता कोई गहन तिमिर से-
मुझको आज जगाता है।

कोई हाथ पसार रहा है-
मन से मुझे पुकार रहा है,
क्या जानूँ, वह कौन हृदय में-
आँधी आज उठाता है।

तो फिर देखो जाग गया मैं
लगता हूँ अब नया-नया मैं,
देखूँ ज्वार प्रीत का कितना-
मन में आज समाता है।

टूट चुका जो, छोड़ चुका हूँ-
पिछला बन्धन तोड़ चुका हूँ,
नयी रीति से नव उमग से-
मन अब अग्नि जलाता है।

इसमें कोई पाप नहीं है-
मन में पश्चाताप नहीं है,
नव श्रृगार सजाकर ऋतुपति-
अधर-अधर मुस्काता है।

दो

प्यार!

नहीं तुम निराकार हो-

अपना सत्य समझकर ही मैं

सब कुछ तुम पर वार रहा हूँ।

देख सको तो देखो क्षणभर-
कैसी ज्वाला है प्राणों में,
शीतल धार समझ कर तुमको-
पल-पल मुग्ध निहार रहा हूँ।

कोई होगा वह वैरागी-
ममता जिसको बाँध न सकती,
रक्त-मास का मानव मैं तो-
हर क्षण तुम्हें पुकार रहा हूँ।

यह सयोग बड़ा दुर्लभ है-
विरला ही कोई पाता है,
बड़े भाग्य से मुझे मिला जो-
जीवन सत्य सुधार रहा हूँ।

दुनिया चाहे ताने मारे-
चाहे कोई करे ठिठोली,
मैं तो केवल मन की खातिर-
तुम्हें बुला हर बार रहा हूँ।

यह वेदी है परम पुण्य की-
मन की चरम सिद्धि, परिण[illegible],
इस धारा में मगन हु[illegible]
होता अपरम्पार र[illegible] [illegible]।

कोई मेरी शक्ति न तोले-
नहीं चुनौती दे पौरुष को,
सच मानो मैं अपने पन से-
कभी नहीं लाचार रहा हूँ।

यह दुनिया तो निर्मोही है-
याद न इसको कुछ रहती है,
जहाँ मुझे अपना पन मिलता-
वहाँ लुटाता प्यार रहा हूँ।

तुम आई जब अपनी बनकर-
दिल की धड़कन जाग गयी है,
स्वय नमन के हर डोरे में-
आज सजा श्रृगार रहा हूँ।

सच मानो अब मन में मेरे-
कोई कहीं कुभाव नहीं है,
तुम में जागे मेरी पीड़ा-
तुम पर मैं बलिहार रहा हूँ।

मानो या मत मानो लेकिन-
सत्य तुम्हें मैं बतलाता हूँ,
युग-युग से तुम मुझ में औ मैं-
तुम में ही साकार रहा हूँ।

✦ ✦ ✦

तुम आई-
नयनों में कोई
तेरा रूप सँवार रहा है।
इसके पहले-
क्या बतलाऊँ?
मन ने कितना कष्ट सहा है।

अब लगता है-
हर पल तेरे,
प्राणों में ही मैं खो जाऊँ।
तेरी छवि के-
एक-एक कण
को मैं हँस-हँस गीत बनाऊँ।

तेरे केशों-
की वह आभा,
सच मानो, है कितनी प्यारी।
तेरे नयनों-
में बस जाती
उमड़-घुमड़ बदली कजरारी।

तेरे दिव्य-
ललाट गगन पर,
अपनी किरण बिखेर रहे हैं।
बहुत दूर से-
प्रेम पथिक बन
कोई हमको हेर रहे हैं।

रन्ध्र-रन्ध्र में-
श्वास अनाविल,
कोई याद जगा जाती है।
तेरे यौवन-
की मादकता,
पोर-पोर में छा जाती है।

कटि है तेरी-
जैसे कोई,
मृग ने कहीं छलाँग लगायी।
पद के चाप-
चाप पर लगती
रिमझिम सी बरसात समायी।

तेरे पृथुल-
जाँघ पर कितने,
कदलि सुवासित न्योछावर हैं।
तेरे पद-चापों-
पर अलसित,
सरगम के ही नव-नव स्वर हैं।

जब भी तुम-
नयनों में आती
प्राण सुवासित हो जाता है।
अपनेपन को-
भूल अचानक
दर्द प्यार का मुस्काता है।

मेरी हर-
वाणी में कोई,
कथा प्यार की लिख जाती हो।
जीवन के हर-
कण पर मुझको,
रूप अचचल दिख जाती हो।

सच कहता हूँ-
तुम्हें हृदय से,
मैंने बेहद प्यार किया है।
तेरी खातिर-
जन्म धरा पर,
रूपसि कितनी बार लिया है।

मुझे याद है-
बार-बार तुम,
मिल-मिल कर ही हट जाती हो।
मेरी होकर-
और मुझी से,
आखिर में तुम कट जाती हो।

लेकिन अब मैं-
सँभल गया हूँ,
ऐसा कभी न होने दूँगा।
मृदुल प्यार की-
इस वेदी पर
मन को कभी न रोने दूँगा।

जैसे भी होगा–
मैं तुम में,
अपना सर्वस लीन करूँगा।
तेरी श्वास–
श्वास में अपनी
धड़कन तक तल्लीन करूँगा।

तुम शोभा–
अनमोल और मैं
उसका लोभी याचक भर हूँ।
लेकिन मेरी–
निष्ठा देखो,
तुम पर केवल मैं निर्भर हूँ।

इसको कोई–
कुछ भी कह ले,
मुझको अब परवाह नहीं है।
तुम्हें छोड़कर–
और किसी की
मेरे मन को चाह नहीं है।

कह दो कैसे–
किस सज्ञा से
तुमको अविरल यहाँ पुकारूँ?
तेरी भरी–
जवानी के इस,
धन को कैसे सदा निहारूँ

तुम अनन्त-
सागर-लहरों-सी,
कोई तुम को बाँध न सकता।
स्वर की तुम-
अनुल्लध्य शिखर हो,
कोई तुम को साध न सकता।

तीन

कितना मादक तेरा परिचय-
निधि है तेरी रूपसि! अक्षय,
तुम सौन्दर्य-सिन्धु हो अनुपम-
उर्मिल लहर किरण की सरगम।

देखा जब से इन आँखों से-
मन के मुक्त सुघर पाँखों से,
जी करता बस रहूँ देखता-
पढ लूँ अक्षर भाग्य लेख का।

मन करता है, कुछ कह जाऊँ-
चदा को मैं गले लगाऊँ,
लेकिन वह छिपता-लुकता है-
मुग्ध चकोर आग चुगता है।

आँख तुम्हारी खजनवाली-
बड़ी सुहानी अजन वाली,
जिसके कारण घिर जाता हूँ-
लौट-लौट कर फिर आता हूँ।

मन तो है उन्मुक्त सुवासित-
केवल तेरे ही हैं आश्रित,
ठौर नहीं अब कहीं और है-
जीवन का अब यही दौर है।

तुम भी इतना अब मानोगी-
अपना कर अपना जानोगी,
कैसे ज्वार चाँद तक उड़ता-
तुम पर पथ ही मेरा मुड़ता।

कोई इसको भूल बताता-
कोई सुन-सुनकर मुस्काता,
लेकिन है निर्बंध जमाना-
तुम से है सम्बन्ध पुराना।

नहीं कभी अब यह टूटेगा-
हाथ नहीं अब यह छूटेगा,
घट पियूष का मुझे मिला जो-
कौन हटा पायेगा उसको।

खो जाऊँगा तन-मन अपना-
यही मात्र है जीवन-सपना
इसे जतन से मैं रक्खूँगा-
मीठा-मीठा फल चक्खूँगा।

यह सयोग बड़ा नूतन है-
इस पर अर्पित यह जीवन है,
भूल गया सब बात पुरानी-
शुरू हुई है नयी कहानी।

इस गाथा में नव-नव रस है-
जीवन का यह ही सर्वस है,
इसकी होगी कहीं न तुलना-
यह है सात्विक मिलना-जुलना।

हम-तुम मिलकर नये ढग से-
इसे सजायें नये रग से,
तब यह अनुपम और बनेगा-
क्लान्त हृदय का ठौर बनेगा।

✦ ✦ ✦

देख रहे क्या? आगे आओ-
प्राणों में गुदगुदी जगाओ,
हाथ बढा है इसे पकड़लो-
छाती से अब मुझे जकड़लो।

जगी जलन दिल की बाती में-
बिछुड़ी पत्थर की छाती में,
इसे तनिक शीतल तो कर दो-
प्राणों का रस कुछ तो भर दो।

दुनिया में तो द्वेष-जलन है-
सपनों का सूना कम्पन है,
इस पर कोई ध्यान न देना-
अपने-पन को भूल न जाना।

की है मैंने बड़ी प्रतीक्षा-
दी है मैंने कठिन परीक्षा,
तब तुमको अब प्राप्त किया है
तुम पर सब कुछ वार दिया है।

तुम सपनों की एक लड़ी हो-
दृग के आगे सदा खड़ी हो,
तुम पर ही है सारी आशा-
पूर्ण करोगी तुम अभिलाषा।

मेरा यह विश्वास अटल है-
मन में निष्ठा शुद्ध अचल है,
अन्तर का पट खोल निहारो-
'पी के स्वर में तनिक पुकारो।

देखोगी तब ऋतु वसन्त की-
सुषमा न्यारी दिग्-दिगन्त की,
फूल तुम्हारे भी अधरों पर-
स्वय खिलेंगे सहज विहँस कर।

हम-तुम अब तो अलग नहीं हैं-
मन-से-मन अब विलग नहीं है,
एक डाल के विहग बने हैं-
प्रेम रग में स्वत सने हैं।

मेरी इच्छा तुम पर निर्भर-
और तुम्हारी मेरे ऊपर,
जग से कोई बात न कहना-
प्रेम-धारा में खुलकर बहना।

✦ ✦ ✦

डरना मत, यह घृणित नहीं है-
प्रेम दीन या दमित नहीं है,
प्रेम हृदय का पावन मदिर-
देव जहाँ आते हैं फिर-फिर।

माना दैवाघात हुआ था-
इस पर वज्राघात हुआ था,
अन्धकार जो कभी घिरा था-
मेरा सब सौभाग्य फिरा था।

लेकिन अब उसको हम क्यों कर-
रहे सँजोये मन में रोकर,
एक पक्ष था बीत गया जो-
उसको क्या अब रीत गया जो।

जो अब ज्वार चढ़ा आता है-
रन्ध्र-रन्ध्र में मुस्काता है,
करो उसी की अब अगवानी-
लौट गयी है नयी जवानी।

पथ पर इसके फूल बिछाओ-
स्वागत के कुछ गीत सुनाओ,
आओ, और निकट अब आओ-
आज लाज का बंध हटाओ।

हृदय खोलकर मुझे डुबा लो-
दोनों तन को एक बना लो,
रहूँ नहीं मैं फिर एकाकी-
साध न रहने पाये बाकी।

इतना लीन करो, मैं जग को-
भूल चलूँ इसकी जगमग को,
चाह यही बस लीन रहूँ मैं-
तुम में ही तल्लीन रहूँ मैं।।

चार

मत समझो मैं यहाँ धरा पर-
तुम से पहली बार मिला हूँ।

देख-देखकर क्यों तुम चौंके-
मीत नहीं मैं अपने गाँ के,
क्यों रूठे दिखते हो मुझसे-
तुम से क्या लाचार मिला हूँ।

मेरा है सबध पुरातन-
वीत गये हैं कितने जीवन,
याद करो मैं ही तो तुमसे-
आ-आकर हर बार मिला हूँ।

नाम-गाँम से क्या होता है?
व्यर्थ हृदय यह सब ढोता है,
जहाँ कहीं जो मिली तुम्हीं थी-
मैं ही तुम्हें पुकार मिला हूँ।

दक्ष-सुता की कथा पुरानी-
याद नहीं क्या तुम्हें कहानी?
उसी तरह जीवन-सागर के-
आकर मैं इस पर मिला हूँ।

वन्धन है घनघोर भुवन का-
प्रतिपल जीवन और मरण का,
मेरा-तेरा वही पुरातन-
छूटा जब ससार मिला हूँ।

धीर सती ने जब तन त्यागा-
जाते-जाते था वर मांगा,
जीवन के इस कठिन मोड़ पर-
आकर के मँझधार मिला हूँ।

खुलती है जब दृष्टि हृदय की-
भाषा सजती शुभ परिणय की,
गाओ खुलकर 'पिक' की बोली-
लेकर स्नेह अपार मिला हूँ।

✦ ✦ ✦

सच बोलो पहचान रही हो?

11589
11 3-2000

कौन कहाँ से आकर कैसे-
घुलमिल गया प्राण में ऐसे?
इस अनमोल मिलन का रूपसि।
क्या रहस्य कुछ जान रही हो।

तुम्हें पता है?- क्यों जगता है-
दर्द हृदय में क्यों लगता है?
सच मानो तुम मेरे मन से-
कभी नहीं अनजान रही हो।

तुम पर केन्द्रित है यह जीवन-
आशा औ अभिलाषा का क्षण,
मेरे दृग में तुम्हीं जगाये-
प्रतिपल नव अरमान रही हो।

तुम तो बिल्कुल वही रूप हो-
गहन शिशिर में सुखद धूप हो,
तुम्हीं तिमिर तन्द्रा से जगकर-
लाती ज्योति विहान रही हो।

बात-बात में चुप हो जाती-
कारण क्या है? क्यों सकुचाती?
छुई-मुई-सी क्यों लगती हो-
जान मुझे मेहमान रही हो?

छोड़ न सकता व्रत है मेरा-
आया है अब दिव्य सवेरा,
मैं निर्बल हूँ, लेकिन तुम ही-
मन की शक्ति महान् रही हो।

इसीलिए मन सुख पाता है-
प्रबल भरोसा भी आता है,
पार करोगी तुम्हीं हमारे-
सागर में जलयान रही हो।

तुम हो केवल ततु प्रणय की-
नयी किरण हो रश्मि उदय की
मेरे हित में मृदुल सुमन तुम-
कभी नहीं पाषणा रही हो।

✦ ✦ ✦

जाने किसने वर माँगा था-
जनम-जनम तक अपनाने का।

किसे पता था हम दोनों की-
सृष्टि बनेगी प्रिय, सोने की,
लगता हम थे पथ जोहते-
इस शुभ दिन के ही आने का।

ऊषा ने छिड़की है रोली-
गूँजी नभ में खग की बोली,
गाओ तुम भी दिन आया है-
दिल से लग के गाने का।

शूल न कोई कहीं गड़ेंगे-
विघ्न न कोई कहीं अड़ेंगे,
भय है मुझको नहीं तनिक भी-
दुनियावालों के ताने का।

दीप जले पर शलभ मचलते-
स्वय शिखर पर चढकर जलते,

रोक सका क्या कोई जग में-
पथ कभी परवाने का।

हम भी हैं न्योछावर तुम पर-
रोली-मेंहदी औ' कुमकुम पर,
दिवस हमारा लौटा फिर से-
नव श्रृंगार सजाने का।

इसको यों ही भुला न देना-
इसका कुछ उपकार न लेना,
लज्जा की कुछ बात न समझो-
अवसर यह समझाने का।

सत्य यही है बात हृदय की-
लहर उठी है स्नेह-प्रणय की,
मुझे तुम्हीं पर अटल भरोसा-
यह संकल्प निभाने का।।

पाँच

ऊषा की अरुणिम लाली में-
तेरी ही छवि दिखती,
मानो कोई नयी तूलिका-
नयी भावना लिखती।

धीरे-धीरे डगमग पग धर-
चलती हो तुम ऐसे,
आभा उतर रही हो नभ से-
भूतल-तल पर जैसे।

तरु-फुगनी से फिसल-फिसल कर-
रश्मि धरा पर आती,
तेरे चरण-चरण पर लगता-
विहगावलियाँ गाती।

फूलों के दल निखर उठे हैं-
सुरभि मधुर लहराई
लगता ज्यों अधरों पर तेरे-
प्रीति थिरक मुस्काई।

बिहँस रहे जो मोती जैसे-
वे हैं बिम्ब हँसी के,
परिमल बनकर बिखर रहे हैं-
स्नेहिल प्राण खुशी के।

रजनी बीती बजी पैजनी-
रश्मि-किरण की नभ में
लगा कि जैसे स्वर लहराया-
जीवन के सौरभ में।

गंध-सुगंध कली ने भू पर-
आँचल खोल लुटायी,
लगा कि जैसे अंग-अंग में-
मादक सिहरन आयी।

खग की बोली लगी चहकने-
पी के स्वर में अपने,
लगते हैं साकार हुए से-
मन के सारे सपने।

ऊषा क्या? तुम ही आती हो-
राग-रंग से रंजित
फूलों के दल बिछ जाते हैं-
होकर के अभिमंत्रित।

✦ ✦ ✦

उधर उभर कर चढ़ी दुपहरी-
कितना दिव्य गगन है,
तेरी चढ़ती नई जवानी-
का नूतन दर्पण है।

ऊषा का भोला सा दिनकर-
कितना पुष्ट हुआ है,
लगता जैसे तुम्हें प्राप्त कर-
मन सन्तुष्ट हुआ है।

रवि के कोमल कर में मानो-
प्रौढ कथा गढने की,
शक्ति किसी ने पग में भर दी-
शिखरों तक चढने की।

दिप-दिप सारा नभ मडल है-
वेग नया लहराया,
कठिन साधना का धरती को-
नूतन पाठ पढाया।

तेरी उच्छल नई तरगें-
सागर तक लहराती,
हर क्षण इस दोपहरी में भी-
याद तुम्हारी आती।

चचल किरणें तेरी गति की-
आभा आँका करती,
तेरे तन के पोर-पोर में-
मादकता मधु भरती।

देखे कोई, कितना उज्ज्वल-
हर क्षण दिवस चमकता,
मानो तेरा मादक यौवन-
रहता सदा दमकता।

मादकता का भार दिवस भी-
चलता ढोते-ढोते,
तुम भी रूपसि, कभी न थकना-
सध्या होते-होते।

✦ ✦ ✦

दिवस ढ्ला सब पछी बोले-
उतरी साँझ सलोनी,
चलो तुम्हें ही राह पिया की-
अब है छुपके धोनी।

सध्या की झुरमुट में कोई-
आँख मिचौनी खेले,
लगता बढकर मेरा मन ही-
भाव तुम्हारा ले ले।

सिमट गया दिन तुम भी अब तो-
सिमट गयी हो घर में,
ढूँढ रहा हूँ फिर भी तुमको-
मन के शून्य डगर में।

दिन के थके श्रमिक घर लौटे-
नीड़ों में खग आये,
दिन की सारी चहल-पहल अब-
दिन को ही लौटाये।

गायों के दल लौट रहे हैं-
धूल गगन तक छाई,
ऐसे में भी तेरी ही छवि-
दृग में स्वय समाई।

तुम भी थककर बहुत चूर हो-
आओ श्रान्ति मिटा लो,
श्यामलता भू पर उतरी है-
मुझको अक लगा लो।

यही मिलन का स्नेह हृदय के-
तम को दूर करेगा,
बाधाओं के हर पत्थर को-
चकनाचूर करेगा।

साँझ तुम्हारा एक रूप है-
झिलमिल-झिलमिल लगता
धूप-छॉह का यही खेल तो-
प्राण-प्राण में जगता।

✦ ✦ ✦

लगी उतरने निशा ओढकर-
मुँह पर चादर काली,
लगा कि जैसे तुम आई हो-
मुझे जगानेवाली।

क्षण-क्षण झिंगुर का स्वर जागा-
सन्नाटा फिर छाया,
लगा कि जैसे थपकी दे दे-
तुमने मुझे सुलाया।

शान्ति बिछी है किन्तु हृदय में-
वेग प्रणय का चलता,
आँखों में निद्रा ढलती है-
सपना पल-पल छलता।

ऊपर नभ में चाँद एक पर-
अनगिन जलते तारे,
मानो एक अनेक भाव हैं-
मेरे और तुम्हारे।

झिलमिल पट रजनी का कोई-
रह-रह कर सरकाता,
धीरे मृदुल बयास सुवासित-
अपना राग दिखाता।

मन में भाव प्रणय का जगकर-
बन जाता आलिंगन,
ऐसे में कब रह पाता है-
लज्जा का अवगुंठन।

लगता फेंक दिया रजनी ने-
श्याम वसन अकुला के,
चमक रहे जो रत्न-जड़े-से-
अम्बर में छितरा के।

कौन चुनेगा मुक्तावलियाँ-
कौन चितेरा आँके?
हम-दोनों हैं मुग्ध प्रणय में-
कोई नयन न झाँके।

यह रजनी है, इसमें भी पग-
-चाप तुम्हारा जगता,
होश न रहता जब मयक ही-
सीने से आ लगता।

✦ ✦ ✦

देखा जग ने रूप तुम्हारा-
सजता सभी प्रहर में,
जिधर-जिधर पग बढता दिखता-
पथ पर डगर-डगर में।

ऊषा हो या दोपहरी हो-
सध्या काली आई,
रजनी में भी सदा तुम्हारी-
छवि दिखती शरमाई।

सच कहता, मैं तेरी धड़कन-
के ही साथ लगा हूँ,
तेरी छवि के आगे ही मैं-
आठों प्रहर जगा हूँ।

कोई भी कुछ कह ले लेकिन-
सत्य समझलो मेरा,
तेरा ही पहलू है मेरा-
निर्मल रैन-बसेरा।

यहीं श्रान्ति है, यहीं मिलेगी-
जीवन की रस धारा,
इसीलिए हर बार तुम्हीं को-
मैंने सदा पुकारा।।

छह

तुम लगती अनमोल।
न जाने–
कैसे तेरे बोल।।

धरती हर क्षण चक्र लगाती
चलती है अविराम,
इस माटी को नहीं मिला है
आज तलक विश्राम।
पत्ता-पत्ता हर डाली पर
रहा अहर्निश डोल।

जहाँ देखता तुम दिख जाती
बनकर मेरा प्यार
सिमट गया है आज तुम्हीं में
यह विस्तृत ससार।
तुमने दी है खोल सहज ही
मेरी सारी पोल।

उपमा तेरी नहीं कहीं है
तुम हो स्वय प्रमाण
जो भी आते करते केवल
मन से कुछ अनुमान।
मुझ से विलग विहग-सी तुमको
कौन सकेगा तोल।

लगता मेरा हर क्षण तुम में-
पाता सहज निखार
तुम से अलग चीज जो भी है
दिखती मुझे उधार।
तुम्हीं बनी इतिहास हमारा
तुम्हीं बनी भूगोल।

मेरा तो सब कुछ बस तुम से
यही हृदय की बात
तुझ से ही हँसते रहते हैं
मेरे दृग जलजात।
कौन लगा सकता है तेरा
इस धरती पर मोल।

तुझ से ही प्रतिबिम्बित होकर
जग है भाव विभोर
मधुपों-सा मैं घूम रहा हूँ
तेरे चारों ओर।
तुझ से ही यह धरती सजती
हँसता सदा खगोल।

पर्वत पर चढकर देखा है
तेरा उन्नत भाल
अम्बर की आँखों में सजती
तेरी दृष्टि विशाल।
तेरा ही सगीत सुनाता
सागर का कल्लोल।।

सात

प्रकृति आज लगती है ठिठुरी-
बहुत पड़ी है शीत,
दिवस अचानक भूल गया है
ऊष्मा का दर्शन।

झरते रहे गगन के दृग से-
शीतल कण अवदात,
लगता जैसे तुम थीं रूपसि-
सोई सारी रात।

तारों के दल अम्बर में हैं-
दिखते यों चुपचाप,
मानो बजकर घुँघरू पग में-
सोये अपने आप।

कौन जगाये? चाँद जहाँ है-
छिपने को बेताब
आँखों में है किन्तु तुम्हारे-
जगने के ही ख्वाब।

पत्ती-पत्ती सिहर रही है-
पग-पग उठता काँप,
लिपट गये तेरी वेणी से-
गहन शिशिर के साँप।

इसीलिए यह सिकुड़ी दुनिया-
आज न आती पास,
शीतल-शीतल वायु प्रवाहित-
शीतल है उच्छ्वास।

लेकिन मेरे मन में उठती-
केवल एक पुकार,
मुझे पकड़कर सुमुखि, जकड़ लो
होगा यह उपकार।

फिर तो अपनापन न रहेगा-
होगा शुभ अभिषेक,
अलग-अलग रह कर भी दोनों-
प्राण बनेंगे एक।

काँप रहा जग किन्तु मुझे है-
इससे शान्ति अपार,
तड़ित्-ताप से क्षण-भर छू दो-
मेरी यह मनुहार।

हम तुम तो अब अलग नहीं हैं-
फिर यह कैसा खेद
कहाँ किसे मिल पाया अब तक-
ऐसा सहज अभेद।

और करो यह शिशिर प्रवाहित-
काँपे जग का छोर,
किन्तु रहूँ मैं अजन जैसा-
दृग में सदा विभोर।

यही कामना मिटे न तेरे-
मन से मेरी साख,
बनने दूँगा कभी न अपनों
के सपनों को राख।।

आठ

डरती हो ?
क्या शिशिर–
    डराता ?
सूने नभ
पर रोष–
    दिखाता ?

तड़प रहा
है भुवन
शीत से,
किन्तु नहीं
मैं विमुख
प्रीत से।

तन तो
ठठरी की
गठरी है,
मात्र प्रीत
पर ही
ठहरी है।

चाहे जैसी
भी ऋतु
आये
सिर पर
कोई हिम
बरसाये।

फूल बनेंगे
उनके
भी कण,
जमकर
होंगे हम
आकर्षण।

हृदय सदा
रहता है
उन्मन,
तप कर सदा
निखरता
कुन्दन।

इसीलिए
यह कठिन
शीत भी,
झेल रहा
हूँ मैं
अभीत ही।

चलने दो
यह वाण
शिशिर का,
दान ग्रहण
हो मेरे
सिर का।

तभी सफल
हो प्रेम
हमारा
तभी मिलेगा
वह
ध्रुव-तारा।

एक वही
अब लक्ष्य
शेष है,
नहीं तनिक
भी मुझे
क्लेष है।

खोज रहे
सब उन्मन
अपना,
यही प्रेम
का भी है
सपना!

तो फिर
बाण शिशिर
का आये,
रक्खेंगे
हम फूल
बनाये।।

नौ

हम तुम जब तक एक रहेंगे-
सृष्टि हमारी एक रहेगी,
गहन शिशिर की छाया में भी-
दुनिया अविरल कथा कहेगी।

लोग सहम कर सिकुड़े रहते-
अपने पर विश्वास न करते,
तनिक हवा जो चली तमक कर-
रहते हैं सब डरते-डरते।

लेकिन मन का भाव बदल दो-
देखोगे फिर रूप अनोखा,
प्रेम-मार्ग है यही जहाँ पर-
कभी न खाता कोई धोखा।

इसी प्रेम की पुण्य डगर पर-
हम-तुम मिलकर एक हुए हैं,
इसके कारण अधरों पर अब-
गुंजित गीत अनेक हुए हैं।

यही समझ लो सत्य मिलन है-
होगा और विछोह नहीं अब
टूट न सकता दृग का सपना-
मन-से कर विद्रोह नहीं अब।

मन-माने की बात यही है-
यही हमारी निष्ठा का फल,
प्रेम-द्वार पर इस याचक का-
होगा अर्चन कभी न निष्फल।

लगन प्रेम की जब लग जाती-
आग हृदय में जग जाती है,
तृप्ति बहुत मिलती, जब रूपसि-
सीने से तू लग जाती है।

ऐसा मिलन जहाँ भी होता-
कोई बाधा रोक न पाती,
स्वय ठिठुर कर रह जाता है-
निठुर शिशिर-सा भी उत्पाती।

उसके हिम के बाण अजाने-
अपने कुंठित हो जाते हैं
उसके सब तूफ़ान अचानक-
आँखों में ही खो जाते हैं।

शिशिर स्वय बिजली सा चलता-
लेकिन तुम तक पहुँच न पाता,
तेरे दिल की ज्वलित शिखा में-
अपना वह सर्वस्व गँवाता।

तुम हो जिसपर हुए निछावर-
पथ के सारे कण अवरोधक,
रोक न पाये गति को मेरे-
पग के गीले व्रण अवरोधक।

लगता जैसे शिशिर तुम्हारा-
बनकर आया है अनुचर-सा,
तेरी एक दृष्टि की खातिर-
रहता है जो तरसा-तरसा।

शिशिर तुम्हारा रूप कि जिससे-
बहता पानी भी जम जाता,
सुनकर जिसकी मृदुल याचना-
चलते-चलते पथ थम जाता।

बड़ा जोर है इस निष्ठा में-
कोई तुमको बाँध न पाये,
प्रीति-रीति है यही कि जिसमें-
कोई कर अपराध न पाये।

तुम हो सदा प्रणम्य, तुम्हारी-
याद हृदय में सदा रहेगी,
दो तन एक हुए की गाथा-
दुनिया तुम से सदा कहेगी।

तुम ही हो, जिस ठौर हृदय भी-
अपना नव-श्रृंगार सजाता,
पिघले मन का स्नेह उमड़ कर-
अपना नूतन दीप जलाता।।

नव वसन्त क्या आया।
लगता कण-कण तक पर निखरा-
रूप तुम्हारा छाया।।

फूल खिले हैं डाली-डाली-
कली-कली तक है मतवाली,
अलियों का दल कलियों पर है-
कितना आज लुभाया।

नव मकरन्द पराग भरे हैं-
फूल-शूल तक सब निखरे हैं,
मधुपों के दल ने गुन-गुन कर-
नव-नव रस सरसाया।

कली-कली में है तरूणाई-
लाज आज है खुद शरमाई
सरक रहा यौवन का आँचल-
ऐसा रग दिखाया।

अग-अग में है अँगड़ाई-
सुखद खुमारी दृग पर छाई,
कामदेव ने आज अचानक-
कैसा बाण चलाया।

हँसते नयन सरोज हुए हैं-
उन्नत आज उरोज हुए हैं
बढ़ी हृदय की धड़कन ने तन-
अपना स्वय लुटाया।

अभिषेक

शबनम ने जिनको है सींचा-
वही दूब है प्रणय-गलीचा,
रति ने मानो कुसुमाकर का-
नव अभिसार सजाया।

मानिनि तुम भी कली नयी हो-
मादक रस से छली गयी हो,
पनघट पर इस घट में कैसे-
यह किंजल्क समाया।

उघर रहा है कलियों का दल-
सरक रहा यौवन का आँचल
फूटी किरणों की आभा को-
किसने भला छिपाया।

डगमग पाँव हुए हैं तेरे-
आँख खुली है बहुत सवेरे,
अगों में सयोग कहाँ से-
ऐसा है लहराया।

✦ ✦ ✦

नव वसन्त है गाओ।
गुन-गुन के स्वर में तुम जगकर
और निकट आ जाओ।।

कलियों ने दल खोल दिये हैं-
मन में मधु रस घोल दिये हैं
आँचल का पट ढके न बाधा-
ऐसे गले लगाओ।

मेरे मन में भाव मृदुल हैं-
तेरे दोनों दृग मृदुल हैं,
बड़ी जलन है मेरे उर में-
शीतल इसे बनाओ।

भौंरे बँधते हैं शतदल में-
मन है रेशम के अंचल में,
जरा उघारो, बंधन से अब-
क्षणभर बाहर लाओ।

तरु-तरु-तृण-तृण निखर रहा है-
सरिता का जल सिहर रहा है,
अपने तन-मन के गहरे में-
मुझको और डुबाओ।

लगता है तुम भींग [illegible]
रस में बेसुध [illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]

रस से बरबस मन बेसुध है-
अपना क्या, मन ही परवश है,
भौंरों के मधुपायी मन को-
रस की घूँट पिलाओ।

जब तक अन्तर शान्त न होगा-
मिलन मधुर एकान्त न होगा,
तब तक प्यास जगी रह जाये-
घूँघट तनिक हटाओ।

ग्यारह

मधुऋतु की कुछ बात न पूछो,
करता क्या उत्पात न पूछो।

जहाँ-जहाँ भी दृग पड़ता है
काँटा-सा मन में गड़ता है,
सुषमा का सौन्दर्य उमड़कर-
करता कैसा घात न पूछो।

बिहँस उठी है कली-गली तक-
महक उठी है गली-गली तक,
लता-कुज तक सौरभ-रस की-
बाँट रही सौगात, न पूछो।

भौंरों का दल बौराया है-
मधुरस पीकर अलसाया है
जुटी हुई है कली-कली पर-
अलियों की बारात न पूछो।

ऐसे में तुम स्वय निहारो-
हृदय कहाँ है तनिक विचारो,
मुझ पर कैसी बीत रही है-
देखो खुद साक्षात् न पूछो।

मुझ से कोई भेद न लाओ-
घूँघट का पट दूर हटाओ,
धड़कन क्योंकर बढ़ी हुई है-
सिहर रहा क्यों गात न पूछो।

अधरों का है कोमल पल्लव–
मधुर मिलन से गुंजित उत्सव,
अधर-अधर से मिल जाने दो–
होगा फिर क्या ज्ञात न पूछो।

रस के घट अनमोल मिले हैं–
आँचल में दो कमल खिले हैं,
मुग्ध मधुप जब बँध जायेगा–
होगा विमल प्रभात न पूछो।

शीशे-सा दिल दरक रहा है–
वसन तुम्हारा सरक रहा है,
मुझे डूबने का अवसर दो–
घिरी मिलन की रात, न पूछो।

फूट रहे हैं पनघट पर घट–
जुटा अतुल रसिकों का जमघट,
मचल रहे हैं कर तल मेरे–
छूने को जलजात न पूछो।

कदलि-सी जघाओं के बल–
बिखर रहे फूलों के परिमल,
मन का मादक मदन हृदय पर–
करता क्या आघात, न पूछो।

लीन मधुप हैं शतदल-दल में-
मुझे छिपा लो वक्षस्थल में,
ऐसे कैसे कट पायेगी-
आँखों में यह रात, न पूछो।।

मन में मधु का राग जगा कर
मधु में ही खो जाओ।

देखो ऊषा खिलकर आई-
बजी बाग में नव शहनाई,
आज पपीहे के स्वर में ही-
कोई गीत सुनाओ।

जैसे रश्मि गगन से आती-
लगी सहमने उर्मिल छाती,
अपने इन अल्हड़ गुल्मों को-
आँचल में न छुपाओ।

चमक रही है कुम्-कुम्-रोली-
मसक रही है झीनी चोली
मन के गोपन दीप्त भाव के-
सिर पर फूल चढाओ।

मिलें सहज ही हम तुम ऐसे-
नीर दुग्ध में मिलता जैसे,
कोई भेद नहीं रह पाये-
इतना पास बिठाओ।

यह सयोग बड़ा दुर्लभ है-
शून्य नहीं नयनों का नभ है,
झड़ने के पहले फूलों का-
निर्मल हार सजाओ।

सागर के तट हाथ पसारे-
बुला रहे हैं क्षितिज किनारे,
अपने नभ को मेरे भू के-
आकुल अक लगाओ।

भौंरों का मन करता क्रन्दन-
उतरा कलियों का अवगुठन,
समय नहीं शरमाने का है-
घूँघट तनिक हटाओ।

रह-रह अन्तर फिसल रहा है-
सारा पथ ही बदल रहा है,
आओ, और निकट आ जाओ-
सीने से लग जाओ।।

बारह

आई है कोई कुछ कहने-
चिड़िया चह-चह लगी चहकने।
    कुसुमाकर के घर से निकली-
    यही किरण सौरभ की पहली।

इसकी आभा में है बिम्बित-
नव पराग कके रस से सिंचित,
तेरे अम्बुज दृग के सम्मुख-
बना अतुल सुषमा का आमुख,

यही रूप है जिस पर पागल-
उमड़ पड़ा है मधुपों का दल,
दौड़ रहे सब रस के प्यासे-
झुलस रहे पर दीप्तशिखा से।

कोई कहते इसे अलौकिक-
लेकिन सच है अपना भौतिक,
रूप-ततु जो चचल दृग में-
वही अचचल छवि के मृग में।

रग-रूप जो सूक्ष्म बना था-
जिसका मुक्त वितान तना था,
आज बँधा है वही तुम्हीं-
मेरे दृग की व्योम-मही।

तुम में छवि-भण्डार खिला है-
रस का अक्षय तार मिला है
झकृत झन्-झन् मन बजता है-
किशुक-कण-सा तन सजता है।

बारह

आई है कोई कुछ कहने-
चिड़िया चह-चह लगी चहकने।
कुसुमाकर के घर से निकली-
यही किरण सौरभ की पहली।

इसकी आभा में है बिम्बित-
नव पराग कके रस से सिंचित,
तेरे अम्बुज दृग के सम्मुख-
बना अतुल सुषमा का आमुख,

यही रूप है जिस पर पागल-
उमड़ पड़ा है मधुपों का दल,
दौड़ रहे सब रस के प्यासे-
झुलस रहे पर दीप्तशिखा से।

कोई कहते इसे अलौकिक-
लेकिन सच है अपना भौतिक,
रूप-ततु जो चचल दृग में-
वही अचचल छवि के मृग में।

रग-रूप जो सूक्ष्म बना था-
जिसका मुक्त वितान तना था,
आज बँधा है वही तुम्हीं-
मेरे दृग की व्योम-मही।

तुम में छवि-भण्डार खिला है-
रस का अक्षय तार मिला है,
झकृत झन्-झन् मन बजता है-
किशुक-कण-सा तन सजता है।

कुसुमागन की छटा निराली–
जाग गयी तुम फूलोंवाली,
याचक हूँ स्वीकार करो अब–
मुझको अगीकार करो अब।

✦ ✦ ✦

है उन्मुक्त छटा केशों की–
पुष्पावलियों के रेशों की,
नयन तुम्हारे खजन जैसे–
श्याम पुहुप के अजन जैसे।

कर हैं दोनों तितली के पर–
उड़ते केशर-आँचल फर-फर,
गिरने दो मत इन्हें सँभालो–
मुझको रस में और डुबा लो।

वर्तुल कितने वक्ष नुकीले–
सरसों रँग से सजे सजीले,
अमरित का घट और न ढाँको–
शका से मत मुझको ताको।

कटि है मानो कुसुमित कोंपल–
कम्पित सस्मित प्रतिपल उत्पल,
नव कदम्ब पर चढी खड़ी हो–
शीतल कोई पुष्प झड़ी हो।

रुक-रुक कर तुम ऐसे चलती-
सरिता छप्-छप् चली मचलती।
ऊपर रस में चाँद पगा है-
सागर का उच्छ्वास जगा है।

भाव सहज है तनिक परस दो-
उर से लगकर मन से हँस दो,
मुझे छेड़ने से मत रोको-
जगते मलयज को मत टोको।

मन में कुछ गुदगुदी जगेगी-
भावों में बेखुदी जगेगी,
फिर हम दोनों एक सृष्टि में-
लीन रहेंगे स्नेह-वृष्टि में।

✦ ✦ ✦

जीवन का तो लक्ष्य यही है-
घुर्णित भव का अक्ष यही है,
परम तृप्ति जीवन में पाना-
पुहुपों का मकरन्द लुटाना।

फिर क्यों कृपण बनी तुम ऐसी-
मावस की हो रजनी जैसी,
यह बसन्त का शून्य प्रहर है-
सूना सारा नगर-डगर है।

गाढ़ालिंगन खोज रहा है-
भाव विमल हर रोज रहा है।
पट हैं सूरज-चाँद छिपाये-
ऐसा कौन न जो भरमाये।

भ्रम है लेकिन बड़ा भला है-
रूप तुम्हारा स्वर्ण गला है,
रीति यही जग की दो चलने-
मुझको भी दो तनिक पिघलने।

तेरी रूप-शिखा पर अविरल-
जगी भावना मन की उज्ज्वल,
तुम में है विश्वास यती का-
रंग तुम्हारा बासन्ती का।

छलक रहे यौवन के कल से-
और पपीहा यों ही तरसे,
यह है रीति कहाँ की बोलो-
संयम का सब बन्धन खोलो।

आँखों में अब आँख डालकर-
कर दो जीवन को अति सुन्दर
सलज गाल पर है अरुणाई-
चुम्बित अधरों की परिछाई।

इस पर कोई आँच न आये-
कोई इसको नहीं मिटाये,
यही सृष्टि-आधार बनेगा-
पुण्य पथिक का प्यार बनेगा।।

तेरह

बीत गया हेमन्त धरा पर-
आया कठिन निदाघ,
मुझको है विश्वास, हृदय की-
पूरी होगी साध।

मन के भीतर औ बाहर है-
ज्वाला का उद्रेक,
दृष्टि घुमाओ आज चतुर्दिक-
आग लगी है एक।

इस ज्वाला में जलते रहना-
कभी नहीं आसान,
मात्र तुम्हीं से हो सकता है-
शीतल जलता प्राण।

फूट रहे हैं आज हृदय से-
गरम-गरम निश्वास
आओ सजन लिपट जाओ उर में-
भर लो गाढ़ निश्वास।

श्रान्ति मिलेगी इस ज्वाला को-
पाऊँगा जब लक्ष्य,
जलते सीने पर अब धर दो-
अपना शीतल वक्ष।

जलनेवाला शान्त न होगा-
ऐसा कहाँ प्रमाण,
जिसको है पीयूष मिला, वह-
होगा क्यों म्रियमाण।

जले निदाघ नहीं कुछ चिंता-
तुम हो मेरे साथ,
मेरा क्या जब आज तुम्हारे-
हाथों में है हाथ।

जलन जगत में किन्तु शान्त है-
सदा तुम्हारा अक,
दाह-दग्ध से ढूँढ रहा हूँ-
तेरा मधु-पर्यंक।

चौदह

सूख गये हैं ताल-तलैया-
 सूखा नगर-डगर है,
तुम तो हो पर शान्तिदायिनी-
 किसका तुमको डर है।

जेठ तपे, पर तेरे उर में-
अनुपम शान्ति भरी है,
तेरे सम्मुख मेरे हित भी-
शीतल दोपहरी है।

घर के बाहर पग धरते ही-
ज्वाला दहक सताती,
गरम-गरम लू के झोंकों पर-
याद थिरकती आती।

घर में लौट तुरत आता हूँ-
शान्ति कदाचित पाऊँ,
तेरी छाती से लगकर मैं-
अपनी जलन मिटाऊँ।

आओ मानिनि! आओ ज्वाला-
उर की तनिक बुझाओ
बड़ी तड़प है इस सीने में-
शीतलता बरसाओ।

दिन का चैन रात की निद्रा-
मुझ से दूर हुई है,
ऐसे में सच बोल कि तू भी-
क्या मजबूर हुई है।

फिर क्यों पास न आती मेरे-
अक ना क्यों लग जाती,
दहक रहे प्राणों के इधन-
को क्यों और जगाती।

जलते खग को हृदय लगाकर-
मधुरस तनिक पिला दो,
क्षणभर सुख से सो लेने को-
अपना नीड़ वता दो।

तपता हुआ निदाघ अचानक-
शीतल ज्वार बनेगा,
लू का झोंका लिपट दृगों में-
मधुमय प्यार वनेगा।

वड़ी जलन है बड़ी तड़प है-
इसको तुम्हीं वुझाओ,
जीवन-झर[1] तुम वनकर मेरे-
प्राणों में छा जाओ।।

पन्द्रह

वीत गये दिन कसक जलन के–
ज्वालामय क्षण उत्पीड़न के,
अव तो नभ में घन छाये हैं–
शुभ सदेश पुन लाये हैं।

उस दिन भी तो राम-शैल पर-
दक्ष विरह से था जब कातर,
यही मेह घिर कर आया था-
सपनों का क्षण दिखलाया था।

आओ, मेघ यहाँ भी आओ-
प्यासी भू पर रस बरसाओ,
ऊसर धरती जली हुई है-
तृषा-ताप से छली हुई है।

इसको अपना स्नेह प्रबल दो-
शान्ति मिले, कुछ शीतल जल दो।
बहुत दिनों से राह तुम्हारी-
थकी देखकर आँख बेचारी।

इसे तृप्ति कर नीर पिलाओ-
उतरो भू को गले लगाओ।
कण-कण इसका सूख गया है-
काँटा सा हो रूठ गया है।

लगता भूतल फटा-फटा-सा-
अपनों से भी कटा-कटा-सा
इसमें नूतन रस सरसाओ-
आओ, इसको सरस बनाओ।

राह जोहते दिन बीते हैं-
पनघट पर सब घट रीते हैं,
उतरो नभ से नीचे आओ-
आज झमाझम रस बरसाओ।

✦ ✦ ✦

मेह घिरा अम्बर मुस्काया-
नयन-नयन में सपना छाया,
लौटे मीत हमारे भी दिन-
विहँस उठे हैं प्रतिपल-पल-छिन।

क्यारी-क्यारी फूल खिले हैं-
मुकुल-बकुल सब हिले-मिले हैं,
आओ तुम भी अब लग जाओ-
मेरे प्राणों में जग जाओ।

खग, खगही को हेर रहा है-
कोई कजरी टेर रहा है,
मैं भी तुम्हें पुकार रहा हूँ-
पीड़ा को पुचकार रहा हूँ।

टर्-टर् मेढक का स्वर सुनलो-
कोयल की कू-कू को गुनलो,
छप्-छप् पानी निकल बहा-
अपना भी दिल बहल रहा।

आओ, हम-तुम तार मिलायें-'
मन का कोई गीत सुनायें,
बिरहा की धुन भींग रही है
गीला अम्बर और मही है।

कोई झूला झूल रहा है-
मन अपने को भूल रहा है,
यादों में बस तुम्हीं लगी हो-
साँस-साँस में तुम्हीं जगी हो।

कैसे इतनी देर हुई है?
मन में कोई छुई-मुई है?
खिल-खिल कर जो मुँद जाती है-
पग में बाधा बन जाती है।

खुलकर मेह बरसता जैसे-
आओ रिमझिम बनकर वैसे
कोयल का प्रण डोल रहा है-
बँधा-बँधा पर तोल रहा है।

बड़ी देर से आस लगी थी-
केवल तेरी प्यास जगी थी,
तुम आई, अब घन से घिर कर-
स्वागत है चातक के सिर पर।

स्वाती-जल वह खोज रहा है-
जोह तुम्हें हर रोज रहा है,
सूखे मन को सजल बनाओ-
तड़प रही है प्यास बुझाओ।

सृष्टि मगन है अपने मन में-
बाहर की ही छूम-छनन् में,
किसके दिल पर क्या बीता है?
कौन अभी तक क्यों रीता है?

इसको इसका पता नहीं है-
उसकी तो लौ और कहीं है,
यह विछोह अब ठीक नहीं है-
तेरा कहीं प्रतीक नहीं है।

सोलह

मेह गगन में आये नाचे-
  मन के मुग्ध मयूर।
बोली कोयल-मिलन पिया से-
  अब न अधिक है दूर।

दूर देश से घिर कर आये-
मुक्ता दल नयनों में लाये,
आगत के स्वागत में विह्वल-
हैं विद्युत के नूर।

हरा-भरा है दूब-बिछौना-
मन का मुक्त हुआ मृग-छौना,
ऐसे में रह पायेगा क्या-
कोई भी मजबूर।

केकी तक के कठ खुले हैं-
बकुलों के सब पख धुले हैं,
तेरी खातिर लगे बरसने-
दृग से कोहेनूर।

नयी केतकी प्यार लुटाती-
सोंधी गध धरा से आती,
ऐसे में क्यों आ न सकोगी?
बनो न इतनी क्रूर।

तनिक चकोरों को तो देखो-
जले हुए प्राणों को देखो-
लौ लगने पर स्वय बनी हो-
तुम्हीं स्वर्ग की हूर।

भूला पिछले गीतों का सुर-
कौन कहे, हूँ कितना आतुर,
तेरे आगे नहीं किसी का-
रहता गर्व गरूर।

✦ ✦ ✦

टीस रही है रह-रह मेरे-
मन में कोई पीर,
खुलने लगा अचानक मेरे-
अन्तर का प्राचीर।

जलद गगन से झर-झर आता-
मन में डूबा दर्द बढ़ाता,
आग हृदय की दहकाता है-
छू कर धीर समीर।

सूख गये थे जो भी तरुवर-
जागा उनमें जीवन-मर्मर,
लगे उमग कर तुम्हें बुलाने-
मेरे मन के कीर।

झर-झर-झर घन बरस रहे हैं-
वर्षा में मन हरस रहे हैं,
आओ अपने युग्म करों से-
पोंछो दृग का नीर।

आज धरा पर धूल नहीं है-
प्यार तुम्हारा भूल नहीं है,
गाढालिगन में बँध देखो-
वर्षा की तासीर।

नव हरियाली का है उत्सव-
मुखर दीखता पल्लव-पल्लव,
नयनों के सम्पुट में सिमटी-
तेरी ही तसवीर।

अमराई में लगा हिडोला-
झूल रहा है मन अनबोला,
तेरी पेंगों से लगने को-
मन है आज अधीर।

कहीं कपोतों का स्वर जगता-
मुग्ध कपोती पर जा लगता,
मानो स्वय अनग जगा है-
तान कान तक तीर।।

✦ ✦ ✦

कजरी की धुन-से गीले हैं-
मेरे मन के गीत,
झझा के झोंकों से कपित-
मेरा हृदय अभीत।

तड़क-तड़क कर तड़ित गगन में-
भरती कैसी रोर चमन में ?
लगे ढूँढ़ने किंशुक-अशुक-
मन के खोये गीत।

भरा-भरा है कूल-किनारा-
भींगा सब परिधान तुम्हारा,
ऐसे में क्यों दूर खड़ी हो-
भावों में परिणीत।

चिपका गीला वसन सलोना-
तन का उभरा कोना-कोना,
`छेड़ रही है अमराई से-
कोयल तान पुनीत।

झलक रही है सिहरन गहरी-
छलक रही है यौवन गगरी,
अकित कर दो सूनेपन में-
वर्त्तमान की प्रीत।

घन बरसा तुम रस बरसाओ-
दर्द हृदय में स्वय जगाओ,
बनने दो इस मिलन-प्रहर को-
जग की अनमिल रीत।

कोमल-कोमल दल हिलते हैं-
अधर-अधर से जब मिलते हैं,
पलक बिठा कर इन भावों को-
होने दो उन्नीत।

कटि से कटि जब सट जाती है-
कहाँ भावना अट पाती है,
बँधता सहसा वर्त्तमान में-
भावी और अतीत।

आओ, गीतों को सहलाओ-
यौवन का पीयूष पिलाओ,
बने रहेंगे इस धरती पर-
सब से सदा अजीत।।

सत्रह

इन्द्र-धनुष है तना गगन में-
नई तरगें हैं चितवन में,
ऐसे मुझको नहीं निहारो-
तने तार को तनिक उतारो।

यह सितार है बड़ा लजीला-
अपने सुर में बड़ा हठीला,
तनिक जोर से कस जाने पर-
खोये मन में रस जाने पर।

कोई गीत न गा पाता है-
मन-ही-मन बस अकुलाता है,
इसको कोमल प्यार चाहिए-
पायल की झकार चाहिए।

घुँघरू की धुन बजती छम्-छम्-
तब जगता है इसका सरगम,
ऐसे तो यह पड़ा हुआ है-
नहीं किसी ने इसे छुआ है।

✦ ✦ ✦

देखो है बरसात निराली-
खिली-खुली है नव हरियाली,
बूँदें टप्-टप टपक रही हैं-
नयी जवानी दमक रही है।

आओ इसको छेड़ जगाओ-
अपनी सुध-बुध-ज्ञान भुलाओ,
निरावरण है अम्बर सारा-
दूर क्षितिज का कूल-किनारा।

तुम भी आओ, प्रीत जगाओ-
प्रेम-मिलन का गीत सुनाओ,
लाज जहाँ रहती है अविरल-
खुलता नहीं प्रीत का परिमल।

मन में द्वैत समा जाता है-
अन्धकार-सा छा जाता है,
सत्य यही है, जल्दी आओ,
अपने को तुम स्वय भुलाओ।

तभी मिटेगी जड़ता-कारा-
निर्मल होगी जीवन-धारा,
प्रीति प्रणय की एक बिन्दु है-
अगम गहन यह एक सिन्धु है।

इसकी थाह अथाह नहीं है-
सच्ची जीवन राह यही है
तुम्हें निमत्रण है अब आओ,
सावन-घन को पास बुलाओ।

✦ ✦ ✦

जगा रहे घन जाग गया हूँ-
कायरता को त्याग गया हूँ।
तुम भी जागो दीप जलाओ-
सिक्त स्नेह से घर चमकाओ।

कव से सूना-सूना घर है-
वँधा-वँधा-सा मेरा स्वर है,
इसमें भर दो मलयज पावन-
कर दो निर्मल जीवन-भावन।

नये-नये कुछ फूल खिलाओ-
कण-कण इसका पुन सजाओ,
सुन्दर मन्दिर इसे वना दो-
इस पर स्वर्णिम कलश चढा दो।

प्राण-प्रतिष्ठा करो यहाँ पर-
निर्मल मूर्त्ति हृदय से गढ कर,
जहाँ पुजारी हरदम आयें-
भाव-सुमन अर्पित कर जायें।।

अभिषेक

अठारह

जव बरसात घिरी हो नभ में-
तुम चुपके आ जाना
सव की नजर वचाकर मेरे-
घर छुपके आ जाना।

मन के निर्मल दर्पण पर जब-
उभरे आनन मेरा,
धीरे से तुम मेरे मन में-
करना अपना डेरा।

पड़ा हुआ है सूना-सूना-
इसका कोना-कोना,
खोज रहा है यही गेह तो-
तेरा रूप सलोना।

तेरे बिन ही दरक रही हैं-
इसकी सब दीवारें,
दाह-व्यथा से सूख गये हैं-
जल के सब फव्वारे।

परत-परत पर गरद पड़ी है-
फर्श पड़ा है मैला,
हुआ आज श्रृंगार दान भी-
माटी से मटमैला।

दर-दरवाजे टूट गये हैं-
ईंट-ईंट है बिखरी,
नहीं दिखेगा यहाँ कहीं पर-
तुमको कोई प्रहरी।

पवन यहाँ पर शिथिल मिलेगा-
मानों साँस न चलती,
रात यहाँ की बर्फीली है-
जमकर नहीं पिघलती।

आँगन में है लता न कोई-
कुछ झखाड़ खड़े हैं,
झुलस गये खड़-खड़ पत्तों के-
मात्र पहाड़ खड़े हैं।

ऐसे घर में बोलो निर्भय-
क्या अभिसार करोगी,
प्रणय-मिलन है पथ जोहता-
क्या एतबार करोगी।

सच मानो, तस्वीर घिनौनी-
दूर स्वय ही होगी,
यह कुरूप चट्टान समय की-
चूर स्वय ही होगी।

आओगी तब फूल खिलेंगे-
विहँसेगा घर आँगन,
यहाँ थिरकने स्वय लगेगा-
जीवन का अनुकम्पन।

आओ! तुमको प्रतिपल मेरी-
यह बरसात बुलाती,
धड़क-धड़क कर धड़कन मेरी-
सारी रात बुलाती।

आओगी तो हवा थिरक कर-
सौरभ ले आयेगी,
अपने ही बदरी की कजरी-
आँगन में छायेगी।

ऊषा आकर रोज सवेरे-
घर को स्वच्छ करेगी
यह विरूपता इस घर में फिर-
आते बहुत डरेगी।

पूनम की फिर खिली ज्योत्स्ना-
इसे नहा जायेगी,
पावस में भी नव वासन्ती-
सुषमा लहरायेगी।

गेह बनेगा स्वर्ग-सदन-सा-
मधुरिम बूँद झरेगी
तारावलियों की किलकारी-
घर गुलजार करेगी।

आओ मेरे मन मन्दिर में-
अपनी ज्योति जगाओ,
जीवन के इस पुण्य प्रहर में-
सब सकोच हटाओ।

हम-तुम दोनों एक हुए हैं-
एक सदा रह जायें,
प्रेम-देव की श्री-वेदी पर-
आओ, फूल चढायें।।

उन्नीस

बड़ी लालसा है अन्तर में-
फूल-शूल हैं डगर-डगर में,
इनसे बच-बचकर चलना है-
सघन तिमिर में खुद जलना है।

तभी प्रकाश खिलेगा नूतन-
भू पर होगा उत्सव-नर्त्तन
आओ हम-तुम साध जगायें-
दो प्राणों को एक बनायें।

दुनिया मीत विचित्र बड़ी है-
पग-पग बाधा गहन खड़ी है,
जो भी मिलता अपना कहता-
शब्द स्वार्थ से लिपटा रहता।

निश्छलता का नाम नहीं है-
प्रेम किन्तु बदनाम नहीं है,
जहाँ प्रेम का फूल खिला है-
वहाँ सभी कुछ स्वत मिला है

प्रेम-राग है बड़ा अनूठा-
इसके आगे सब कुछ झूठा,
इसकी तो पहचान यही है-
मन में शका लेश नहीं है।

जहाँ जगा सकोच हृदय में-
मद से घृणित मोह-निलय में,
वहाँ कभी भी सत्त्व नहीं है-
जीवन का मधु-तत्त्व नहीं है।

प्रेम-मत्र है सात्विक मन का-
दृश्य-सूत्र है रूप गहन का,
अनुभव से यह जाना जाता-
कहकर कोई नहीं बताता।

✦ ✦ ✦

हम तुम दोनों एक हुए हैं-
निर्मल सत्य विवेक हुए हैं,
पथ पर बाधा नहीं टिकेगी-
शक्ति न कोई विलग करेगी।

मन में दृढ सकल्प चाहिए-
गति की रति भी स्वल्प चाहिए,
जहाँ कहीं यह मिल पायेगा-
वहाँ प्रकाश नया आयेगा।

देखो मैं अब टूट चुका हूँ-
अपने पथ से छूट चुका हूँ,
मुझको अब अनुरक्ति चाहिए-
तेरे मन की शक्ति चाहिए।

इसीलिए जब मन रोता है-
याद तुम्हारी ही ढोता है,
तुम हो मेरा अविचल सबल-
हृदय-सुमन का निर्मल परिमल।

पास तुम्हारे जब रहता हूँ-
कष्ट न कोई तब सहता हूँ,
मन में जगते भाव सुनहले-
कभी न देखा जिनको पहले।

ऐसे तो दिन कट जाता है-
पल-छिन में सब बँट जाता है,
किन्तु हृदय को तोष नहीं है-
अपने पर सन्तोष नहीं है।

इसीलिए हर बार पुकारा-
चाहा तेरा सदा सहारा,
आओ मन का ताप मिटाओ-
मेरे प्राणों से लग जाओ।

✦ ✦ ✦

मैंने जीवन तुम में देखा-
तुम हो मेरे भव की रेखा
जब-जब अन्तर अकुलाता है-
चैन नहीं मन में आता है।

आ जाता हूँ पास तुम्हारे-
जैसे मिलते साँझ-सकारे
देखो चलकर दूर क्षितिज पर-
मधुव्रत ज्यों हो स्नेह जलज पर,

घर था पहले जो भी उजड़ा-
था विश्वास हृदय से उखड़ा,
उसमें फिर से ज्योति जगी है-
स्नेह-लगन चुपचाप लगी है।

इस ज्वाला को नहीं बुझाओ-
प्रीत हृदय मे और जगाओ,
यही नया श्रृगार बनेगी-
नयी शक्ति-आधार बनेगी।

दुनिया तो है बेहद निष्ठुर-
सदा सताने को है आतुर,
इसकी कुछ परवाह न करना-
मन में इसकी चाह न करना।

दुनिया के प्रति बनना निर्मम-
यही मात्र है अपना सयम,
अगर कहीं कुछ माँग करोगी-
नयी याचना कहीं धरोगी।

तो फिर दुनिया तुम्हें बिदक कर-
देखेगी बस हाथ झटक कर
किन्तु अगर तुम अलग रहोगी-
स्नेह प्राप्त तुम तभी करोगी।

✦ ✦ ✦

आओ, और निकट तुम आओ-
मुझ में अपना स्नेह जगाओ,
धरा बनेगी निर्मल पावन-
नहीं रहेगा अन्तर उन्मन।

सब कुछ अपना स्वच्छ बनेगा-
स्नेह-रग में प्राण सनेगा,
गीतों के भी पख खुलेंगे-
पुण्य सलिल से प्राण धुलेंगे।

जीवन में तुम शुभ्र प्रहर हो-
नयनों में तुम ज्योति प्रखर हो,
सृष्टि जहाँ तक दिखती चचल-
बिम्बित तेरी ही छवि अविचल।

तुझ में मैं औ मुझ में तुम हो-
उत्सव की रोली-कुमकुम हो,
तुम पर मेरा भव न्यौछावर-
रहो सदा जीवन में भास्वर।

यही कामना शेप-नमन में-
प्रतिपल जीवन और मरण में,
हम तुम दोनों एक रहेंगे-
जाग्रत सदा विवेक रहेंगे।।

बीस

तड़प रहा था जब से अन्तर-
गीत जगा है तब से
किसे भला मालूम कि मेरी-
सृष्टि चली है कब से।

सब कुछ अपना स्व
स्नेह-रग में प्राण र
गीतों के भी ।
पुण्य सलिल र

तुझ में मैं औ मुझ म
उत्सव की रोली-कुमकुम
तुम पर मेरा भव
रहो सदा जीवन में

इसे देखकर दुनिया वाले-
सहम उठे हैं ऐसे,
विद्युत से ज्यों कोमल कलिका
लिपट गयी हो जैसे।

चौंक उठे क्यों इन्हें देखकर-
हैं क्या ये बेगाने?
सच बोलो, क्या तेरे मन से-
लगते थे अनजाने।

यही भाव हैं सदा गगन में-
रहते हैं जो उमड़े,
इनके ही ज्वारों पर अबुक-
रहते नभ में घुमड़े।

नये-नये लगते हैं क्योंकि-
स्वर हैं इनमें नूतन,
इनकी लौ पर रहा समर्पित-
मेरा सारा जीवन।

सच पूछो तो बिलकुल नूतन-
कोई भाव नहीं है,
दुनिया भर में सब से न्यारा-
मेरा घाव नहीं है।

कितनी बार बनी है धरती-
कौन भला कह पाये ?
कब से घिरते जलद रहे हैं-
कौन भला बतलाये ?

कब से पी-पी-पी-पी कह के-
कोयल कूक रही है,
पीड़ा आँसू बनकर कब से-
यों बेजार बही है।

कौन कहेगा चदा में कब-
दाग उभर कर आया,
जाने पहले-पहल कहाँ था-
सागर-मन लहराया।

कौन बताये प्रथम-प्रथम कब-
मन-मयूर था झूमा,
कौन चमन में कोमल कलि को-
किस भौंरे ने चूमा।

ये हैं ऐसे भाव कि जिनका-
कोई अन्त नहीं है,
पहले जो थे, अब भी जग में-
सब श्रीमन्त वही है।

इसे देखकर दुनिया वाले-
सहम उठे हैं ऐसे,
विद्युत से ज्यों कोमल कलिका
लिपट गयी हो जैसे।

चौंक उठे क्यों इन्हें देखकर-
हैं क्या ये बेगाने?
सच बोलो, क्या तेरे मन से-
लगते थे अनजाने।

यही भाव हैं सदा गगन में-
रहते हैं जो उमड़े,
इनके ही ज्वारों पर अबुक-
रहते नभ में घुमड़े।

नये-नये लगते हैं क्योंकि-
स्वर हैं इनमें नूतन,
इनकी लौ पर रहा समर्पित-
मेरा सारा जीवन।

सच पूछो तो बिलकुल नूतन-
कोई भाव नहीं है,
दुनिया भर में सब से न्यारा-
मेरा घाव नहीं है।

इक्कीस

मेरे इन गीतों की माला-
गाकर तुम्हीं सुनाओ
वे तुलुक हैं, सुरभि-सरीखे-
इनको गले लगाओ।

भेद यही है कैसे कोई-
भाव उतर कर आता,
किस शैली में कौन सहज ही-
बाँध उसे दुहराता।

मैं ही रानी! अपने मन से-
भावों को चुन लाया,
गीतों का परिधान पिन्हाकर-
तेरे पास बिठाया।

तुम से है अब यही निवेदन-
अपना इन्हें बनालो,
ये हैं बोल प्रीति के मनहर-
अपने स्वर में गा लो।।

इक्कीस

मेरे इन गीतों की माला-
गाकर तुम्हीं सुनाओ
वड़े तुतुक हैं सुरभि-सरीखे-
इनको गले लगाओ।

दिन में जलते रहे झुलस कर-
तम में पिघले तुम्हें परस कर,
इनकी शक्ति तुम्हीं हो, चाहे-
जैसे इनको गाओ।

जब-जब कोई कष्ट हुआ है-
भाव हृदय का नष्ट हुआ है,
इन गीतों में जगा रहा हूँ-
तुम भी इन्हें जगाओ।

शिशिर माह में काँप उठे थे-
मन-ही-मन चुपचाप उठे थे,
आज जगे हैं अपनी ऊष्मा-
जग कर तनिक पिलाओ।

मधुऋतु के अन्तर में सरसा-
षट्पद-सा रहता था तरसा
इस मिलिन्द को नव पराग के-
रस से अब सरसाओ।

जब निदाघ का जोर बढ़ा था-
शुष्क स्वरों-सा यही चढ़ा था,
चकित-चकित इन गीतों को तुम-
अपने पास बिठाओ।

होती थी जब वर्षा झम्-झम्-
इनका भी बजता था सरगम,
अपनी पायल के घुँघरू से-
इनको जरा सजाओ।

जब भी जैसी घड़ी-पड़ी थी-
गीतों की धुन सदा खड़ी थी,
मत समझो ये हैं परदेशी-
अपना इन्हें बनाओ।

कोई क्योंकर इन्हें पुकारे?
ये हैं मन-से सदा तुम्हारे,
एक बार खुद कह दो इन से-
लिपट कंठ से जाओ।

ये पागल हैं कोमल स्वर के-
पास रहेंगे तेरे घर के,
तुम भी अपनी छाया देकर-
इन पर स्वत्व जमाओ।

ये आये हैं प्यार माँगने-
यौवन का उपहार माँगने
आँखों की पलकों पर रखकर-
इनको प्रिय! दुलराओ।

इनका अभिनय भू का पत्ति
व्याप्त भुवन में इनका पी
इनके चरण-चरण पर अपने-
मन का तार वजाओ।।

समाप्त